



स्वामी लक्ष्मण दास जी अवधूत

## एक सलाह (शिक्षा)

- उसे जप जो अविनाशी है और वह है-ब्रह्म, तुम्हारी आत्मा, SOUL; परमात्मा ।
- वेद भगवान कहते हैं-“सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रह्म” अर्थात् ‘ब्रह्म’ सत्य, ज्ञान और अनन्त है । ये लक्षण केवल जीव के आत्मा स्वरूप में ही पाये जाते हैं । इसलिए जीव स्वयं ब्रह्म स्वरूप है ।
- शास्त्रों ने ब्रह्म को ही सच्चिदानन्द अर्थात् सत्, चित्त, आनन्द बताया है ।
- मुहम्मद साहब ने इसी को हस्ति, इल्म और सुरूर बयान किया है ।
- CHRIST ने इसी को GOD-ALL TRUTH, ALL CONSCISNESS AND ALL BLISS कहा है ।
- संत कहते हैं-चिदानन्द रूप : शिवोऽहम्, शिवोऽहम् ।
- सुखमनी साहब ने कहा है-

राम राम सब कोई कहे, कहने का विचार,

एक राम ज्ञानी कहे, एक राम संसार ।

राम नाम जपने का भी एक ढंग है । उसे संसारी भी जपता है और ज्ञानी भी । संसारी उसे राजा दशरथ का बेटा मानकर जपता है, परन्तु ज्ञानी उसे सर्व व्यापक, सर्व शक्तिमान, अनन्त परमेश्वर जान कर जपता है । राम नाम के तुल्य कुछ है ही नहीं ऐसा विचार करो । गुरु मुख से केवल एक ही बार समझ लेना है कि सभी राम हैं और मैं स्वयं भी राम हूँ । ध्यान करें तो रोशनी सामने आ जाये । यह समझ में आ जाये कि मैं ‘शरीर’ (शव) नहीं, शरीर का मालिक ‘शिव’ हूँ-शिवोऽहम् । ज्ञान रूपी शराब पीकर हमेशा के लिये मस्ती में डूबे रहना है ।

## दो शब्द

एक दिन मुझे 'श्री लक्ष्मण माला' का अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। १०८ पुष्पों की यह अमूल्य माला मन को बहुत भा गई। भाव उठा कि क्यों न इस अमूल्य माला को एक छोटी पुस्तिका के रूप में (कविताओं को छोड़कर) छपाया जाय, जिससे यह सर्वसुलभ हो सके।

पूज्य स्वामी जी महाराज की अनुमति अनिवार्य थी। उनके चरणों में गया तो ज्ञात हुआ कि मिलने का समय बीत चुका है, अब महाराज जी दर्शन नहीं दे पायेंगे। पूर्ण विश्वास के साथ बैठा रहा, अन्त में पूज्य स्वामी जी के चरणों में अनुग्रह भेजी, तो महाराज श्री ने कृपा कर केवल ५ मिनट के लिए मिलने की स्वीकृति प्रदान कर दी। चरणों में पहुँचा और अपनी इच्छा व्यक्त की तो तुरन्त सहर्ष उदारतापूर्वक अनुमति प्रदान कर दी, परन्तु साफ कह दिया कि मैं इसमें कुछ नहीं करूँगा, केवल पुस्तक छपाकर लाओगे तो बांट दूँगा। कितने उदार और स्पष्टवादी हैं—स्वामी जी महाराज।

यह प्रयास श्री चरणों में समर्पित है। कोई भूल-रह गयी हो तो पूज्य महाराज श्री तथा भक्तगण उदारतापूर्वक क्षमा कर देंगे।

प्रथम संस्करण	- एक प्रेमी
रामनवमी ३ अप्रैल, १९९० (५००० प्रतियाँ)	
द्वितीय संस्करण	- वही प्रेमी
गंगा दशहरा २१ जून, १९९१ (५००० प्रतियाँ)	
तृतीय संस्करण	- वही प्रेमी
२९ दिसम्बर १९९४ (५००० प्रतियाँ)	
चतुर्थ संस्करण	- वही प्रेमी
दीपावली ३० अक्टूबर १९९७ (५००० प्रतियाँ)	
पंचम संस्करण	- वही प्रेमी
३१ दिसम्बर, २००० (५००० प्रतियाँ)	

# 108 अमूल्य पुष्पों की “श्री लक्ष्मण माला”

**पुष्प-१**—ईश्वर सर्व व्यापक है—उस परमात्मा को बारम्बार प्रणाम करता हूँ, जिसके अंशमात्र से संसार की उत्पत्ति, स्थिति और लय का चक्कर आदिकाल से चलता आ रहा है, जो सब में व्यापक और वास्तव में सबसे न्यारा है। जड़-चेतन में व्यापक होने के कारण सब काल और सब वस्तुओं में सर्वदा मौजूद है। अपनी अज्ञानता के कारण ही उससे मिलने में देरी है। सन्त-महापुरुष तो केवल संकेत मात्र ही देते हैं, किन्तु उसका अनुभव तो भव्य के द्वारा ही करना पड़ता है। वह तो केवल अनुभवगम्य मात्र ही है। उसका अनुभव आज करें, चाहे दस दिन, दस वर्ष या दस जन्म के बाद करें, पर करना स्वयं को ही है। स्वयं में ही है। बिना अनुभव किये परम शान्ति को प्राप्त करना, दुर्लभ ही नहीं अपितु असम्भव है।

**पुष्प-२**—शान्ति तुम्हारे अन्दर है—याद रखो, संसार के प्राणी-पदार्थों में शान्ति नहीं। न कभी हुई, न होंगी, न हो

सकती। ठीक इसके विपरीत परमात्मा में अशान्ति है नहीं, न हुई, न होगी, न हो सकती। तृष्णा के कारण प्राणी दुःखी हो रहा है। यदि इन्सान किसी से भी सुख की आशा न करे तो उसको कभी भी दुःख हो नहीं सकता, यह अनुभूत प्रयोग है।

जब कभी भी आप अशान्त या दुःखी होवें तो समझ लेना कि आप कुछ न कुछ चाहते हैं। बस उस चाहना को ही विवेक द्वारा भंगा देना, फिर तो आप तत्काल सुखी हो जाओगे।

कोई दूसरा दुःख देता है, यह केवल भ्रान्ति ही है, क्योंकि परमात्मा तो आनन्दस्वरूप है। उसके पास दुःख है ही नहीं तो देगा कहाँ से ? और संसार जड़ है। अतः केवल अपने अज्ञान के कारण ही सांसारिक लोग दुःखी होते हैं।

**पुष्प-३—सुख-दुःख दोनों मेहमान हैं—**सुख-दुःख, सर्दी-गर्मी, मान-अपमान, लाभ-हानि, जन्म-मृत्यु ये सब द्रव्य रात-दिन की तरह बराबर आने-जाने वाले हैं। अतः विचारवान् को चाहिये कि इसके आने-जाने पर स्वयं शान्त रहें। अर्थात् मन को विवेक द्वारा समझायें कि :—

अरे मन ! शान्त रह, यह भी गुजर जायेगा।

**पुष्प-४—**कोई व्यक्ति सब को खुश नहीं कर सकता—कोई व्यक्ति सबको खुश नहीं कर सकता। किन्तु, यदि

वह चाहे और पुरुषार्थ करे तो ईश्वर के सामने अवश्य सच्चा रह सकता है। संसार को दामाद भी बना लें, फिर भी वह खुश होने का नहीं। एक को खुश करें, तो दूसरा नाराज हो जायेगा। इसलिये बाबा ! इस पचड़े में न पड़कर, अर्थात् सब को खुश करने की कोशिश न करके, केवलमात्र संसार के बनाने वाले, संसार के मालिक को खुश कर लो। यदि वह खुश हो जायेगा तो सब खुश हो जायेंगे। संसार तो कुत्ते की पूँछ की तरह टेढ़े स्वभाव वाला है। जैसे कुत्ते की पूँछ को हजार बार तेल से मालिश करके छोड़ने पर टेढ़ी ही रहेगी, वैसे ही संसार की हालत है। इसलिये हर हालत में अपने दिल को प्रसन्न रखना चाहिये।

**पुष्प-५—पहचान लो आप कौन हैं—हेवान;  
इन्सान या भगवान—**

(क) यदि इच्छायें ज्यादा हैं तो हेवान, (गंदे अर्थात् गरीब) हैं।  
यदि इच्छायें कम हैं तो इन्सान (शहनशाह) है। यदि  
इच्छायें नहीं हैं तो भगवान (खुदा) है।

(ख) जो व्यक्ति बुरे के प्रति बुराई करता है, वह हेवान। जो  
व्यक्ति बुरे के प्रति बुराई नहीं करता है वह इन्सान। जो  
व्यक्ति बुरे के प्रति भलाई करता है वह भगवान।

(ग) जिसको अपना दोष दिखाई न दे, वह हैवान। जो अपने दोषों को देखकर निकाले, वह इन्सान। जो अपने दोषों को निकाल चुका है वह भगवान।

(घ) जो अकेले खाता है वह हैवान। जो बाँटकर खाता है, वह इन्सान। जो केवल दूसरों को ही खिलाता है वह भगवान।

अर्थात् छुप कर खाना गन्दगी, अकेले खाना शर्मिन्दगी और बाँटकर खाना बन्दगी के बराबर है।

**पुष्प-६—निश्चिन्त होकर साधना में लगे रहो—**किसी ने कभी कहा था कि :—

“फकीरा फकीरी दूर है, जैसे लम्बी खजूर।

चढ़े तो पीवे प्रेम-रस, गिरे तो चकनाचूर।।”

किन्तु मैंने इस पर विचार किया और इस निर्णय पर पहुँचा कि :—

“फकीरा फकीरी नज़दीक है, जितनी तेरी तौफीक।

चढ़े तो पीवे प्रेम-रस, गिरे तो बिल्कुल ठीक।।”

भावार्थ यह है कि परमात्मा की ओर एक भी कदम बढ़ाने वाले की दुर्गति तो होती नहीं अर्थात् भगवद् गीता के छठे अध्याय में :—

“न हि कल्याणकृतकश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति॥६-४०॥”

भगवान् श्री कृष्णचन्द्र ने अर्जुन के प्रति यही बात विस्तार में कही है। उस योगभ्रष्ट की दुर्गति तो होती ही नहीं। वह बहुत काल पुण्यलोक के भोगों को भोगकर उत्तम श्रीमान् या योगीकुल में जन्म लेकर फिर साधना में लगकर अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है।

**पुष्प-७—**मन से वैरागी बन जाओ—जो जंगल में रहकर भी दुनियाँ के भोगों की मन में इच्छा रखते हैं, वे तो वास्तव में शहर ही में रहते हैं। इसके विपरीत जो शहर में रहकर भी जंगल (हिमालय) का चिन्तन करते हैं अर्थात् भोगों से उपराम है, उन्हें वास्तव में जंगल में ही समझना चाहिये।

**पुष्प-८—**असली धन (धर्म) का संग्रह करो—धन भी कमाओ। पर बाबा ! केवल धन कमाने में ही इस दुर्लभ मानुष-जन्म को बर्बाद न कर देना। इसके साथ-साथ धर्म भी कमाते रहना—जो स्थायी साथी है क्योंकि धन इस लोक में ही काम देगा और धर्म परलोक में भी काम देता है।

**पुष्प-९—**अन्दर बाहर से सरल बनो—संसार में ४ प्रकार के प्राणी होते हैं :—



(१) अंगूर जैसा।

(२) बादाम जैसा।

(३) बेर जैसा।

(४) सुपारी जैसा।

(१) अंगूर :—जैसे अन्दर बाहर से मुलायम और मीठा होता है, वैसे ही कोई-कोई प्राणी अन्दर-बाहर से कोमल और मधुर होते हैं। इन्हें ही महापुरुष कहते हैं।

(२) बादाम :—जैसे ऊपर से बड़ा कठोर किन्तु अन्दर से गिरी-मीठी होती है। इसी प्रकार से कुछ लोग बाहर से सख्त-स्वभाव के दिखते हैं, परन्तु अन्दर से दयालु और उदार होते हैं।

(३) बेर :—जैसे ऊपर से मुलायम और मीठे होते हैं परन्तु अन्दर से गुठली कठोर होती है। इसी प्रकार कुछ लोग ऊपर से मधुर स्वभाव वाले पर अन्दर से कठोर और दम्भी होते हैं।

(४) सुपारी :—जैसे अन्दर बाहर से कठोर होती है, वैसे ही कुछ लोग अन्दर बाहर से क्रूर और कटुभाषी होते हैं। अतः अंगूर व बादाम जैसे बनने का प्रयत्न करें।

अथवा

४ प्रकार के प्राणियों के अन्य विभाग निम्न हैं।

- (१) दाता।
- (२) उदार।
- (३) कंजूस।
- (४) मक्खीचूस।
- (१) दाता :—जो सदैव देता ही-रहे, -जैसे वृक्ष, बादल-व गंगा नदी के समान।
- (२) उदार :—जो मिलजुल कर बाँट कर खा लेता है।
- (३) कंजूस :—जो केवल स्वयं ही खाता है।
- (४) मक्खीचूस :—जो स्वयं भी नहीं खाता है और दूसरों को खाता-पीता देखकर भी जलता-भुनता रहता है, जिसे केवल जमा करने की बीमारी ने घेर रखा है। चमड़ी जाये पर दमड़ी न जाये। अतः दाता या उदार बनने की कोशिश होनी चाहिये।

संसार के लिये जीवन के हर पल में हर हीं डर है। डर से चिन्ता और चिन्ता से दुःख उत्पन्न होता है। यदि दुःख से बचना चाहते हो तो अपने अन्तःकरण को शुद्ध, निर्मल और ईश्वर स्वरूप बनाओ। छल, कपट, बनावट दिखावे को छोड़ दो। वैराग्य के बिना, डर, चिन्ता और दुःख का अन्त ही नहीं हो सकता।

“वैराग्यमेवाभयम्”

श्रुति जगाती है—“अभयम्”—निडर हो जाओ।

विषय-भोग, आयु, यौवन, धन-दौलत, इन सब को अनित्य और क्षण भंगुर समझ कर इनकी आसक्ति को त्याग दो। तब जाकर वैराग्य उत्पन्न होगा।

संत-महापुरुषों के पास वैराग्य रूपी बल होता है। उनको संसार के किसी भी प्राणी तथा पदार्थ के साथ राग नहीं होता। पैसा उनके चरणों में धक्के खाता है। संसारी उनके अंगों हाथ बांध कर खड़े रहते हैं। इन्कार करने पर भी वह हाथ जोड़ देते हैं वह तो मौत से भी नहीं डरते, उल्टे मौत का स्वागत करते हैं।

**पुष्प-१०—**सब की कीमत चुकानी पड़ेगी—जिन्दगी की कीमत मौत, जवानी की कीमत बुढ़ापा, खुशी की कीमत गम (दुःखी), संयोग की कीमत वियोग, सम्मान की कीमत अपमान, स्तुति की कीमत निन्दा, एवं सुख की कीमत दुःख सबको चुकानी होगी, ईमानदारी से चुका दो अन्यथा जुमाने सहित अपमानित करके प्रकृति जबदेस्ती हड़प ही लेंगी।

**पुष्प-११—**नेक कर्म करो, प्यार बाँटते रहो—अच्छे या बुरे कर्मों का फल हमें स्वयं ही सुख या दुःख के

रूप में भोगना पड़ेगा। भगवान के घर में देर है अंधेर नहीं।  
इसलिये साधक को चाहिये कि कुछ भी करने से पहले सोच ले  
कि उसका नफ़ा किस में है और नुकसान किस में।

शास्त्र कहता है :—

धर्म का फूल सुख है और पाप का फल दुःख। संसारी हर  
वक्त चिल्लाता है—हाए सुख ! हाए सुख ! पर धर्म वह करता  
नहीं ! दुःख से वह घबराता है, फिर भी पाप कर्म वह जान बूझ  
कर करता है।

**पुष्प-१२—बुराई से डरो—**बदनामी से डरकर डरो।  
लेकिन इससे भी अधिक बदी से अर्थात् बुराई से डरने। प्रार्थः  
दुनियाँ के लोग बुराई से तो डरते नहीं किन्तु बदनामी से डरते  
रहते हैं, अर्थात् बुरा करना बुरा नहीं समझते किन्तु बुरा कहलाना  
बुरा समझते हैं। भलो के साथ भलाई करना तो साधारण सी बात  
है, परन्तु विशेषता तो तब है, जब बुरे के साथ भी भलाई करे।  
वास्तव में ऐसा करने वाला ही भक्त है, सन्त महात्मा है।

रास्ते दो ही हैं।

(१) एक "नेकी" यानि परउपकार, ईश्वर-चिन्तन, सत्संग,  
मोक्ष यानि आत्म-साक्षात्कार—परमं शान्ति की प्राप्ति का।

(२) दूसरा "बदी" यानि विषय-भोग, ऐश-वृ अशर्त करने का, छूठ, चेरी, दगा फरेबी, बेईमानी, रिश्वत खोरी करके धन-दौलत इकट्ठा करने का, यानि नरक में जाने का। आदमी एक रास्ते दो ! फैसला उसे खुद करना है, कि किस रास्ते पर चलना है।

**पुष्प-१३**—धन बाँटते जाओ—जो धनवान होकर निर्धनों की सहायता नहीं करता, और जो निर्धन होकर तप नहीं करता, अर्थात् जीवन में आयी हुई कठिनाइयों को खुशी से यानि भुगवद् चिन्तन करते हुए सहर्ष सहन नहीं करता, इन दोनों के गले में पत्थर बाँधकर समुन्दर में डुबो देना चाहिये।

यदि आपके पास जरूरत से ज्यादा धन आ गया है, तो उसे उदास्ता से-गरीबों, यतीमों, निर्धनों में बांट दो। अधिक धन बांटने के लिये मिला है। अगर ऐसा न करोगे, तो यह धन सदा नहीं रहेगा। यह बहती नदी की तरह है, नष्ट हो जायेगा। उस समय पछताओगे कि इसे अच्छे काम में क्यों नहीं लगा दिया। साँचिए साथ क्या जायेगा। मृत्यु के साथ ही सारी धन सम्पत्ति यहां की, यहां धरी रह जायेगी। एक कौड़ी भी साथ जाने-वाली नहीं।

**पुष्प-१४**—असली साथी कौन—मनुष्य के तीन मित्र होते हैं—

- (१) एक तो ज़रोमाला—धन-दौलत, जो मृत्यु तक साथ देता है।
- (२) दूसरे सगे-सम्बन्धी व मित्र-मण्डली, जो श्मशान तक ही अपनी मित्रता दिखाते हैं।
- (३) तीसरे साथी हैं, नेक-कर्म, जो मरने के बाद भी साथ जाते हैं तथा साथ देते हैं। इसीलिये तीसरे साथी का अधिकाधिक ध्यान रखना चाहिये।

**पुष्प-१५**—ठण्डे दिल से सोचो—अपनी निन्दा सुनकर बुरा न मानो, आग बबूला मत हो। सोचो वास्तविकता क्या है? यदि उसने गलत कहा है, तो तुम्हारा कुछ बिगड़ नहीं सकता, और यदि उसने सत्य कहा है तो अपने आप को सुधार लो। तुम्हारे दोनों हाथों में लड़हू हैं। वास्तव में किसी की निन्दा या बुराई सुनना भी उतना ही बुरा है जितना कि निन्दा करना। अर्थात् यदि आपको कोई किसी की निन्दा सुनावे, तो फौरन विनम्रता से कह दो, 'चलो जी! जो करेगा सो भरेगा।' हम और आप दोनों प्रभु-भजन में लगे। व्यर्थ बातों से क्या लाभ होगा।

**पुष्प-१६**—वो खुशी किस काम की—जो तुम्हारे साथ मलाई करता है, उसकी याद पत्थर पर लिखो और बुराई

करने वाले की याद रेत पर लिखो। अर्थात् भलाई का स्मरण रखो और बुराई को सदैव के लिये भूल जाओ। वह खुशी किस काम की जो किसी व्यक्ति को सताकर या दुःखी करके ली जावे। —

**पुष्प-१७—**तृष्णा असाध्य रोग है—सारी दुनियाँ की सम्पत्ति मिलने पर भी तृष्णा पूरी नहीं होती। जिस तरह आग में घी डालने पर अग्नि और भी प्रज्ज्वलित होती है, उसी प्रकार भोग भोगते-भोगते इच्छायें भी बढ़ती जाती हैं। अतः संतोष रूपी अमृत पीकर सदैव के लिये तृप्ति हो जाओ।

**पुष्प-१८—**दूसरों के काम आओ—दौलत, धन एक बहती नदी है, जो कुछ इससे नेकी कर ली जाय यानि शुभ काम में लगा दी जाय, वही बची रहेगी। बाकी सब तेजी से बही जाती है। भावार्थ यह है कि जो व्यक्ति तन, मन, धन से दूसरों के काम नहीं आता, तो उसके भी कोई समय पर काम न आयेगा। प्राणी सेवा ही सच्ची ईश्वर पूजा है।

**पुष्प-१९—**सरलता : सफलता की कुंजी है—पहाड़ से गिर कर इन्सान उठ सकता है पर नजर से गिरा हुआ आदमी नहीं उठ सकता। अतः सब से सरल व. निष्कपट व्यवहार करो।

**पुष्प-२०—सावधान—**यह दुनियाँ कच्चे कुएँ की तरह है। इसके किनारे बड़ी सावधानी से खड़ा होना चाहिये। ज़रा सी असावधानी से इस दलदल रूपी कुएँ में यदि गिर गये तो निकल न सकोगे। जैसे—जो मनुष्य तैरना नहीं जानता वह यदि नदी में कूदेगा, तो अवश्य ही डूबेगा। इसलिये सद्गुरु रूपी मल्लाह से संसार रूपी जल में कमल की तरह रहने की युक्ति रूपी तैरना सीखो।

**पुष्प-२१—हर चीज़ का सदुपयोग करो—**किसी भी वस्तु का अच्छा या बुरा होना, उसके उपयोग के ऊपर आधारित होता है। उदाहरणार्थ—अग्नि घर भी जलाती है और रोटी भी पकाती है। एकान्त स्थान योगी को भी चाहिये और भोगी को भी। इसी तरह धन, समय इत्यादि की आवश्यकता दोनों को पड़ती है, ज्ञानी को भी, अज्ञानी को भी। अन्तर इतना है कि ज्ञानी उनका सदुपयोग करके परमार्थ व ईश्वर प्राप्ति के लिये और अज्ञानी उनका दुरुपयोग यानि विषय-भोगों के लिए करता है।

**पुष्प-२२—चुगलखोरों से बचो—**जो व्यक्ति दूसरों के अवगुण तुम्हारे सामने कहे, वह तुम्हारे अवगुण भी दूसरों के सामने अवश्य कहेगा। इसलिये इस निन्दक, चुगलखोर का विश्वास मत करना।



**पुष्प-२३**—वर्तमान में जिओ—जीती हुई की याद मत करो, आगे की चिन्ता न करो। वर्तमान की किसी भी वस्तु से राग न करो और परमपिता परमात्मा के लिये सदैव सतत व्याकुल रहो, यही असली भजन है।

**पुष्प-२४**—परमात्मा तुम्हारे अन्दर है—सुख स्वरूप परमात्मा तुम्हारे अन्दर है। वास्तव में बाहर खोज-खोज कर तुमने प्रभु को खो ही दिया है। अतएव अन्दर ही असली खोज करो, तो आनन्द की अनुभूति होगी।

**पुष्प-२५**—मिलेगा मुकद्दर—तुम्हारे पास वही प्राणी व पदार्थ आते हैं, जिसके तुम भागीदार हो। तुम्हारे पास से वही प्राणी-पदार्थ चले जाते हैं, जो अब तुम्हारे भाग्य का नहीं रहा। आगे तुम्हें वही मिलेगा जो कुछ तुम यहाँ दोगे। अर्थात् बबूला का पैड लगाकर आम की आंशों कदापि नहीं कर सकते। इस लिये आप बुरे काम छोड़कर जितना बन सके, भलाई करो।

याद रखो। अगर हमारे कमों (प्रारब्ध, भाग्य, किस्मत) में दुःख लिखा है तो अवश्य मिलेगा, कोई रोक नहीं सकता। पति शराबी-कबाबी मिला जायेगा, पत्नी चरित्रहीन मिला जायेगी, जीवन साथी बिछुड़ जायेगा। बुद्धि नष्ट हो जायेगी।

हे जीव। अब तों हौंश सम्माल। नेक कर्म धर्म कर ले,  
पुण्य कमा ले, यही तेरे साये जायेंगे।

सुनो और जीवन में उतारो !

- (१) पाप अत्याचार को छोड़ो। झूठ, नीच कर्म त्याग-कर सत्य-बोलो और धर्म पर चलो।
- (२) मां बाप, दीन दुःखी, संत फकीरों की सेवा करो और आशीर्वाद लो। इस से तुम्हारे पाप कर्म नाश होंगे और अन्तःकरण शुद्ध होगा।
- (३) ईश्वर के दिये हुए तन, मन, धन को संसार की सेवा और ईश्वर चिन्तन में लगा दो।
- (४) अपने दोषों का सदा निरीक्षण करते रहो और निकालो भी।

**पुष्प-२६** — भगवद-चिन्तन करना ही पड़ेगा — यदि राग-द्वेष किया है तो उसकी कीमत वैराग्य व प्रेम से देनी ही होगी। विषयों का चिन्तन मिटाने के लिए भगवद-कीर्तन करना ही होगा। स्वार्थ-सिद्ध किया है तो सेवा करनी ही पड़ेगी। अभिप्राय यह है कि कोई भी वस्तु बिना मूल्य के नहीं मिलती। उदाहरणार्थ — संयोग की कीमत वियोग, जवानी की कीमत बुढ़ापा, सुख की कीमत, दुःख, अवश्य चुकानी पड़ेगी।

संसार में ऐसा कोई सुख नहीं जिसका अन्त दुःख में न हो। विषय-भोगों का सुख क्षण भंगुर है, रोग, दुःख और सन्तोष से भरा पड़ा है। इसलिये विचार द्वारा इनका त्याग करना चाहिये। इसी में जीव का कल्याण है।

**पुष्प-२७—**किसी को अपना मत समझो—जो कुछ भी तुम्हें मिला है, उसको अपना मत समझो, क्योंकि उसे अपना मानने से ही लोभ, मोह, अभिमान इत्यादि की वृद्धि होती है। एक प्रभु को सब कुछ मानने से यह विकार तुरन्त ही मिट जाता है। जैसे मोह के रहते तक ही हानि का, अभिमान के रहने पर ही अपमान का, और कामना के रहने पर ही अभाव का दुःख होता है।

याद रखो ! यह बात संसारियों को अच्छी नहीं लगती, मगर है कटु सच !

**पुष्प-२८—**सन्तोषी बनो—तुम्हें जितना धन, जितना अधिकार, जैसा शरीर, जैसा सम्बन्धी, जैसी सामग्री प्रारब्धानुसार मिली है, उसी में प्रसन्न रहना चाहिये, इसी का नाम सन्तोष है।

**पुष्प-२९—**लोभी सदा दुःखी—लोभी तो सदा धन का ही भजन करता रहता है। करोड़ों की मालिक होकर भी

सन्तुष्ट नहीं रहता है। वास्तव में, जब तक मनुष्य धन वहन चाहता है, तब तक उसे निर्धन ही कहना चाहिये।

**पुष्प-३०—सुख सदैव नहीं रहेगा—**संसार में ऐसा कोई प्राणी नहीं है, जिसके पास सुख सदैव रहे। सुख का अन्त दुःख है। अतः सुखी प्राणी को चाहिये कि जहाँ तक बन सके, सेवा कर दूसरों को सुख पहुँचाये, क्योंकि सुख सदा एक रस नहीं रहेगा।

**पुष्प-३१—सबकी सेवा करो—**परमात्मा को सब प्राणियों में व्यापक समझते हुए जो भी तुम्हारे सामने आये, उसकी सेवा कर दो।

**पुष्प-३२—मन को साफ करो—**इन्सान का मन सफेद कपड़े की तरह है, उसे जिस रंग में डुबो दो, वही रंग चढ़ जाये। इसलिये नेक-कमाई व प्रेम-प्रेम के रंग में रंगो, तो सदा ही प्रसन्न रहोगे एवं सारा संसार आपको शान्त प्रतीत होगा।

**पुष्प-३३—पानी में लकीर की तरह रहो—**वह आदमी अच्छा है जो नाराज देर से हो; परन्तु मान जल्दी जाये।

इसके विपरीत वो आदमी बुरा है, जिसे क्रोध जल्दी आ जाये और राजी देर से हो। मतलब क्रोध भी तीन प्रकार का होता है :—

(१) पत्थर में लकीर जैसा अमिट होता है।

(२) रेत में लकीर जो कुछ क्षण होता है।

(३) पानी में लकीर जो रहता ही नहीं।

बीती हुई बातों को याद करके ज़लो मत। भूल जाओ, माफ कर दो। इसी में भलाई है। अगर कल किसी ने हम को गाली दी थी, तो वह मर गयी, वो बैर खत्म हो गया। उसे बार-बार याद करने से गुस्सा, बैर, द्वेष ही पैदा होगा, मन मलिन और अशान्त होगा। हो सकता है गाली देने वाले ने प्रायश्चित्त कर लिया हो, परन्तु आप ने अपने अन्दर कूचरा (ज़हर) भर रखा है। अतः माफ कर दो, भूल जाओ।

**पुष्प-३४**—सर्वदा नेक बनो—नेक-दिलवाला आदमी गाय की तरह है, जो घास खाकर दूध देती है और बुरे आदमी साँप की तरह है, जो दूध पीकर जहर उगलते हैं।

**पुष्प-३५**—चेतो—होशियार ! तुम्हारी यह जवानी, सुन्दरता, रंग-रूप, ताकत, शानो-शौकत, धन-दौलत सब पल-भर का तमाशा है। काहे को अकड़े हो ? किस नशे में डूबे हो। अभी

सख्त बीमारी या मौत का झोका आया, तो प्रता नहीं चलेगा—यह कहाँ उड़ जायेंगे।

क्यों बुरे, पाप और नीच कर्म करके धन-दौलत इकट्ठा कर रहे हो ? काहे अपने लिये नर्क का घर बना रहे हो ?

**पुष्प-३६—तकदीर व तदबीर—**तकदीर (प्रारब्ध) और तदबीर (पुरुषार्थ) दो पहिये हैं जो ज़िन्दगी की गाड़ी की चला रहे हैं। इसलिये इन दोनों को ठीक रखना जरूरी है।

**पुष्प-३७—संतान की शिक्षा—**यदि अपनी संतान को ठीक रखना चाहते हो तो सदैव अपने आप को ठीक रखो, क्योंकि शिशु अनुकरण या नकल ज्यादा करता है, अनुसरण, कम करता है। इसलिये उनको स्वयं आचरण करके बताओ यानि दिखाओ।

आदर्श वैदिक शिक्षा में बालकों के लिये कहा है :—

मातृ देवो भव। पितृ देवो भव। आचार्य देवो भव।

बालक, माता को देव मानने वाला हो, पिता को देव मानने वाला हो, आचार्य को देव मानने वाला हो अर्थात् इन सबको परमात्मदेव मानने वाला हो।

३३. वृद्धसेवया विज्ञानम्—अर्थात्, वृद्धों की-सेवा-से दिव्य ज्ञान प्राप्त करें।

सत्गुरु को माता, पिता, भाई, मित्र, इष्ट, कुल देवता एवं अपने प्राणों से भी अधिक आदरणीय एवं सेवा करने योग्य मानें। सत्गुरु ही अपार कृपा करके शिष्य को ज्ञान एवं विज्ञान द्वारा संसार की दल-दल से खींचता है, सत् मार्ग दिखलाता है, एवं कल्याण करता है।

पुष्प-३८—जरूरी बातें—ध्यान दो—

- (१) बिना ब्रह्मविद्या के नये साधक को एकान्त छतरनाक है।
- (२) दौलत देने से घटती है पर ब्रह्मविद्या देने से बढ़ती है।
- (३) 'उधार देना' मोहब्बत की कैची है, उससे जितना बचोगे, सुखी रहोगे।

हमारे सद्गुरु महारोज जी अपने अनुभव बताते थे कि किसी को दुश्मन बनाना हो तो उधार दे दो।

पुष्प-३९—जीवन की नश्वरता, भ्रम राद रखो; आयु दिन प्रतिदिन इस तरह घट रही है। जैसे फूटे घड़े से पानी बहता चला जाता है। इसलिये अपना कल्याण, शीघ्रातिशीघ्र करो। घर में आग लग जाने के बाद कुंआ खोदना बेकार होता है।

**पुष्प-४०—**पाप का बँटवारा नहीं—'सावधान' जिन रिश्तेदारों के लिये तुम पाप करते हो, वे तुम्हारे बुरे कर्मों की सज़ा के हिस्सेदार न बनेंगे। तुम्हें स्वयं ही दण्ड भुगतना पड़ेगा।

**पुष्प-४१—**यात्रा अकेली की—याद रखें—दौलत और जवानी ठहरने वाली चीज़ नहीं है। इसलिये न तो इन पर इतराओ, न ही इनका दुरुपयोग करो। क्योंकि जब तुम्हें यहाँ से जाना है, तब किसी मित्र या सम्बन्धी को साथ नहीं ले जाना है। चूँकि अकेले ही आये हैं और अकेले ही यहाँ से जाना पड़ेगा। मौत के मुँह से कोई नहीं बच सकता और न ही कोई साथ जा सकता है।

**पुष्प-४२—**क्रोध चाण्डाल है—क्रोध भले ही शेर नहीं है, पर शेर से भी ज्यादा खतरनाक ज़रूर है। पाप भले ही ज़हर नहीं है पर ज़हर से भी ज्यादा हानिकारक ज़रूर है। क्योंकि विष एक बार प्राण लेगा, पर क्रोध और पाप, जन्म-मरण के चक्कर में डीलते ही रहेंगे। अतः इनसे बचो।

**पुष्प-४३—**मानना सीखो !—यह आशा मत करो कि सब तुम्हारी ही बात मानें, सब तुम्हारे ही आज्ञाकारी बनें और



तुम्हारे हर-कार्य की प्रशंसा करें। -

जब 'तुम' दूसरों के लिये ऐसा नहीं कर सकते तो दूसरों से ऐसी आशा क्यों रखते हो ? यदि रखोगे तो 'अवश्य' ही निराशा, दुःख, अपमान और विषाद के सिवाय कुछ भी हाथ नहीं लगेगा। दिन बुरे हों तो कोई बात नहीं परन्तु दिल बुरा नहीं होना चाहिये।

**पुष्प-४४**—साधना हर जगह, हर अवस्था में !—जब-जहाँ जैसी परिस्थिति हो, तब तहाँ तदनुसार साधना में लग जाओ। यह मत सोचो कि मेरी स्थिति अमुक जैसी हो जाय या अमुक-अमुक कार्य पूरा करके मैं साधना में लग जाऊँगा। जब लका में रहकर विभीषण ने साधना की थी, तो आप जहाँ हो, वहीं साधना क्यों नहीं कर सकते ? जो करना है, जल्दी कर लो।

**पुष्प-४५**—अच्छा, भगवान् तेरी मर्जी—अपनी जीवन-होरी परमात्मा को समर्पित कर दो फिर निर्भय और निश्चिन्त हो जाओगे।

तथा सोचो कि :—(१) जो होना था, वही हुआ। (२) जो होना चाहिये वही हो रहा है। (३) जो होना होगा, वही होगा।

ऐसा समझ कर सद्बुद्धि या सद्गुरु जो मार्ग बतलायें,

उसके अनुसार पुरुषार्थ करो। पुरुषार्थ करने पर जो उस पुरुषार्थ का परिणाम निकले, उसे प्रभु की इच्छा या प्रारब्ध समझ कर सदैव मन को शान्त रखो। तात्पर्य यह है कि जब भी विकट समय आये जैसे—किसी का लड़का कुएं में गिर पड़े, तो सब से प्रथम धैर्य रखना चाहिये, फिर विचार करें, तत्पश्चात् पुरुषार्थ करें। इसके बाद जो भी परिणाम अच्छा या बुरा निकले उसे सहर्ष सहन करें और कह दें—‘अच्छा, भगवान तेरी मर्जी।’

**पुष्प-४६—गर्भ-वास की प्रतिज्ञा**—उस वक्त को याद करो, जब माँ के पेट में उल्टे लटके हुए थे। इस छोटी सी काल-कोठरी में गफलत में पड़े हुए थे और भगवान से प्रार्थना करते थे कि एक बार यहाँ से निकाल दो प्रभुजी। फिर तो ऐसा स्वच्छ जीवन बिताऊँगा कि मुझे पुनः जन्म-मरण के अनादि चक्कर में न आना पड़े।

**पुष्प-४७—बाबा, मन की आँखें खोल**—जैसे बिजली का तार दिखाई देता है और बिजली के तार में व्यापक (छिपी हुई) बिजली (करेन्ट) दिखाई नहीं देती, वैसे ही तार की तरह शरीर दिखाई देता है किन्तु शरीर में छुपी हुई असंग व्यापक चेतन आत्मा दिखाई नहीं देती। परन्तु करेन्ट रूपी आत्मा नहीं है, ऐसा कहना निरी मूर्खता है।

**पुष्प-४८—**कमी दुःख नहीं देती—प्राणी और पदार्थ का अभाव अर्थात् कमी दुःखदायी नहीं, किन्तु प्राणी और पदार्थ के अभाव की अनुभूति, यानि कमी का एहसास करना, दुःख देता है।

चाह के गुलाम भी बने रहो और शांति भी मिले—असम्भव। तुम्हें अपनी चाहना की पूर्ति के लिये दूसरों के आगे दीन होना ही पड़ेगा। तूष्णा ने तुझे कंगाल और ज़लील कर दिया है। चाह को पूर्ण करने के लिये तुम झूठ, चोरी, दगा-फरेबी, बेईमानी, रिश्वतखोरी और कई प्रकार के बुरे, पाप और नीच कर्म करते हो, धन, दौलत इकट्ठा करके अपने लिये पाप और नर्क का द्वार खोलते हो। इतना करने पर भी तुम्हारी चाहना पूरी नहीं होती। यह उल्टी तूष्णा बन जाती है।

**पुष्प-४९—**ज्ञानी व अज्ञानी में अन्तर—जैसे स्त्री पति को भी आलिंगन करती है और पुत्र को भी, परन्तु पति को आलिंगन करते समय काम-भाव और पुत्र को आलिंगन करते समय शुद्ध वात्सल्यमय प्रेम-भाव उत्पन्न होता है। वैसे ही अज्ञानी संसार को आसक्तिपूर्वक भोगता है और ज्ञानी अनासक्त भाव से भोगता है। दोनों में भावनामात्र का फेर है।

संसार अपने को शरीर मानता है। उसे मैं-मेरे का रोग

लगा हुआ है। यही अहंता-भ्रमता-उसके-लिये संसार रूपी जाल में बन्धन का कारण बन जाती है। वह सोचता है—“मैं कर्ता हूँ, मैं इसका फल भोगूँगा”। यह कर्ता-भोक्तापन अहंकार की जड़ है। अहंकार से किये हुये कर्म को बार-बार भोगना पड़ता है। इसी लिये संसारी को बार-बार जन्म लेना पड़ता है। जन्म हुआ तो मृत्यु अवश्य होगी।

ज्ञानी अपने को आत्मा मानता है। आत्मा शरीर से बिल्कुल अलग है। उसका विश्वास है कि सब काम प्रकृति द्वारा हो रहा है। शरीर इन्द्रिया अपना-अपना काम कर रही हैं। आत्मा तो साक्षी (द्रष्टा) है। वह जानता है कि सब कुछ ईश्वर की-मरजी से हो रहा है। वह न कर्ता है और न भोक्ता है। इसलिये वह बन्धन से सदा मुक्त है।

**पुष्प-५०—**यमराज का वारन्ट—जैसे मकान-मालिक किरायेदार को कमरा खाली करने के लिये नोटिस देता है, वैसे ही यमराज जीवों को शरीर खाली करने के लिये वृद्धावस्था और-रोगों के माध्यम से नोटिस देता है। -

**पुष्प-५१—**विषयों से नाता तोड़ो; ईश्वर संग जोड़ो—जैसे मन्दिर जाने के लिये घर को छोड़ना ही पड़ता है, वैसे ही परमात्मा के चिन्तन हेतु विषयों से मुक्त होना ही पड़ेगा।

**पुष्प-५२**—अपना अधिकार त्याग दो—ईस बात पर विशेष ध्यान मत दो कि उसने हमारे साथ क्या किया था अथवा उसका हमारे प्रति क्या कर्तव्य था; परन्तु इस बात का अवश्य ही विचार करो कि हमारा उसके प्रति क्या कर्तव्य है। अर्थात् दूसरों के अधिकार की रक्षा करो, अपना अधिकार त्याग दो। कभी क्रोध नहीं आयेगा। अगर क्रोध आ जावे तो हमें फासी पर झंझा दो।

**पुष्प-५३**—स्वयं को परखें—चाह को व्याकुलता से, प्रेम को त्याग से, ज्ञान को समता से, तप को सहनशीलता से, प्यार को सेवा से, प्रीति को चिन्तन से, शक्ति को श्रम से, उदारता को दान से माप कर देखिये।

अपने दिल को सच्चाई से टटोलो :—

(१) क्या आप अपने और सभी के अन्दर ईश्वर को व्यापक समझते हैं ?

(२) क्या आप केवल ईश्वर को सच मानकर उसकी प्राप्ति के लिये यत्न करते हैं ?

(३) क्या आपने संसार को झूठ, नाशवान एवं जन्म-मरण की खान जान कर वैराग्य उत्पन्न किया है ?

- (४) क्या आप धन-दौलत को झूठ जान कर त्याग की इच्छा रखते हैं ?
- (५) क्या आप ने राम-नाम को धारण किया है ?
- (६) क्या आप संसार में निस्वार्थ रूप से परोपकार करते हैं ?
- (७) क्या आप ईश्वर की मर्जी में सदा खुश व संतुष्ट रहते हैं ?
- (८) क्या आपने राम के सिवाय सबकी आशा छोड़ दी है ?
- (९) क्या आपने सचमुच ही अपना तन मन धन सौंप दिया है ?
- (१०) क्या आपने सन्तों के संग रह कर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, वैर-द्वेष, पाप कर्म आदि विकारों को छोड़ा है ?

अगर आप के पास इन सवालों का जवाब नहीं, तो आप अपने को और दूसरों को धोखा ही दे रहे हैं। भटकते ही रहोगे, रात दिन, सारी उम्र, हर जगह, कुछ प्राप्त होने वाला नहीं। अन्त में निराशा ही मिलेगी।

इस मार्ग में सच्चाई, सरलता और यकीन के बिना सफलता मिल ही नहीं पाती।

**पुष्प-५४—**समर्पण करना ही पड़ेगा—परम प्रभु जिसे अपनाना चाहते हैं, उसके सभी विश्वास तीढ़ देते हैं। अपना

सब कुछ समर्पण करते ही प्रीतम मिल जाते हैं—मन को सब तरह के विचारों से खाली करना ही प्रभु मिलने का साधन है।

**पुष्प-५५**—मन को विषयों में घुसने से रोको!—मन जहाँ-जहाँ भी जाय, वहाँ-वहाँ से खींचकर स्थिर करे। सोचो कि सब नाशवान है, दुखरूप है। अपने मन को समझाओ।

अरे मन ! शान्त रह, यह भी नहीं रहेगा !

**पुष्प-५६**—भोग से रोग बढेगा—जो दूसरों पर विजय प्राप्त करता है, वह तो वीर है, परन्तु जो अपने मन और इन्द्रियों को अपने वश में रखता है, वह तो महावीर अर्थात् महात्मा है। इसलिये मन और इन्द्रियों के विषयों का त्याग करना सीखो। त्याग-वैराग्य से मन इत्यादि वश में होंगे। यदि त्याग न करोगे, तो राग की वस्तु छिन ही जायेगी और यदि तप न करोगे, तो रोग, भोग को छिन ही लेगा। यदि दान न दोगे तो कोई अपने आप ले ही जायेगा।

**पुष्प-५७**—दुःख में अखण्ड—प्रफुल्लित रहो—तुम्हारे ऊपर जब कष्ट आवें तो प्रभु की कृपा समझो और

विचार करो कि प्रभु की अपार दया है कि बहुत बड़ा कष्ट थोड़े ही में टल गया। यह अनुभवजन्य प्रयोग है कि दुःख घबराने से, दुःख और न घबराने से आघा हो जाता है। दृष्टान्त के लिये जैसे किसी एक संत पर किसी ने राख का टोकरा डाल दिया, तब वह खुशी में नाचकर कहने लगे कि भगवान की बड़ी कृपा हुई। किसी ने पूछा—इसमें शुक्र की क्या बात है? तब वे कहने लगे कि मेरे ऊपर आज आग बरसने वाली थी। परमात्मा ने राख से ही सिंचित कर दिया।

**पुष्प-५८—**करने में सावधानी, होने में प्रसन्नता—तुम जो कुछ भी करो, उसके लिये अपने मन से यह पूछ लो कि अमुक कार्य से मेरे प्रभु प्रसन्न होंगे कि नहीं अर्थात् हमारे लक्ष्य में क्या यह बाधक तो नहीं है? करने में सावधानी तथा होने में प्रसन्न रहना ही असली साधन है।

करना चाहते हो तो नेक कर्म करो। संत फकीरों और दीन दुखियों की सेवा करो, लेकिन अहंकार को मिटा कर। उनके आशीर्वाद से तुम्हारे पाप कर्म नाश होंगे और अन्तःकरण शुद्ध होगा।

**पुष्प-५९—**कृपया अपने दोष देखो और निकालो श्री!—वही साधक संयमी है जो किसी की मूर्खता को देखकर



त्रिद्विधांता नहीं। अर्थात् जो साधक दूसरों के दोष नहीं देखता, वही वास्तव में साधक है। साधक अपने दोष देखता भी है, और निकालने का भी प्रयत्न करता है।

बुरे स्वभाव साध-बिच्छु की तरह जन्म जन्मान्तर तक काटते रहते हैं। अतः सावधान।

देखना चाहते हो तो अपने दोषों और दूसरों के गुणों को देखो। इससे तुम्हारा अभिमान नष्ट होगा, उन्नति होगी और दूसरों के दिल में तुम्हारे लिये मान और ध्यार उत्पन्न होगा।

**पुष्प-६०—आशा के दास—**आशा के गुलाम भी बने रहो और सुख-शान्ति भी प्राप्त कर लो, यह असंभव बात है। जो लोग आशा के दास हैं, उन्हें सारी दुनियाँ का दास बनना पड़ता है और जिन्होंने आशा को दासी बना लिया है, उसकी तमाम दुनियाँ स्वयं ही दास बन जाती है।

संसारियों से तुझे क्या मदद मिलेगी। ये तो खुद भिखारी हैं, वे तुझे क्या देंगे। क्यों इनके पीछे मारे-मारे फिर रहे हो? माँगना है तो एक प्रभु से माँगो, जो कि सबको देने वाला है। माँगना भी है तो अक्षय वस्तु की भीख माँगो, तो सूर्यदा के लिये दीनता मिट जायेगी।

**पुष्प-६१—**विवेक-वैराग्य को अपनाओ—जैसे पानी जब गन्दा होता है, तब उसमें फटकरी डालकर साफ किया जाता है, वैसे ही अपने गन्दे मन को विवेक-वैराग्य रूपी फटकरी डाल कर साफ करो।

**पुष्प-६२—**बड़ों के एहसानों को मत भूल—जिस परमात्मा ने तुम्हें यह शरीर, बुद्धि, सूर्य, चन्द्र, हवा, पानी, जमीन, आग, फल, फूल इत्यादि अमूल्य वस्तुएं दी हैं और जिन माता-पिता व गुरुजनों ने अनेक कष्ट उठाकर तुम्हें सुयोग्य बनाया है, उनके एहसानों को हर वक्त याद रखो। मतलब माँ-बाप एवं सद्गुरु के कहे वचनों का बुरा कमी मत मानो, क्योंकि वे हमारे हित के लिये ही कहे जाते हैं।

**पुष्प-६३—**कटु वचन मत बोल रे!—यदि दूसरों के दिल को बस में करना चाहते हो तो सदैव मीठी वाणी बोलो, जिसमें शहद और शक्कर पड़ी हो। आपसे कोई एक मिनट भी मिलने आवे तो मीठे वचन रूपी-अमृत लेकर जाये न कि जहर। कड़वे वचन जहर से भी ज्यादा खतरनाक होते हैं।

**पुष्प-६४—**सच्चा मित्र कौन ?—जब तुम किसी से मित्रता करो तो अपनी आत्मा और उसमें कोई भेद न रखो।

मित्रता तभी स्थायी होती है, जब स्वार्थ रहित होकर विपत्तिकाल में बिना कहे सहायता करे, तो सच्चा मित्र जानो।

**पुष्प-६५—परस्पर देवो भव ! (समता विज्ञान)**—पति-पत्नी वही खुश रह सकते हैं जो प्रत्येक काम परस्पर सलाह से किया करते हैं और दूसरों के सामने परस्पर आदर करें और सत्कार से बोलें। क्योंकि, दो बैलों की तरह पति-पत्नी गृहस्थ रूपी गाड़ी को खींचते हैं। यदि दोनों मिलकर एक ही दिशा में जोर लगायेंगे, तभी गाड़ी अपने लक्ष्य तक सुचारु रूप से सुरक्षित पहुँच पायेगी। इसके विपरीत झगड़-उधर या आगे-पीछे एक दूसरे के विरुद्ध जोर लगायेंगे या खींचातानी करेंगे तो आगे बढ़ न सकेंगे। प्रत्युत गृहस्थ रूपी गाड़ी को ही तोड़ देंगे।

**पुष्प-६६—किसी को बुरा मत समझो—**सच्च सन्त-महात्मा एवं साधक-भक्त वही है, जो अपने द्वारा की हुई नेकी अर्थात् अच्छाई और दूसरों के द्वारा की हुई बदी याने बुराई को हमेशा के लिये भूल जायें। तथा, जो अपने दोषों को और दूसरों के गुणों को सदैव याद रखें और बुराई का बदला भी मलाई से दें वही सच्चा ज्ञानी, भक्त या महात्मा है।

**पुष्प-६७—**जीते जी मरे जाओ—(१) बुद्धिमान विचार कर कार्य करता है और अज्ञानी काम करने के बाद विचारता है। (२) अपनी आवश्यकताओं और कामनाओं को जितना कम कर लोगे; उतने ही सुखी रहोगे। (३) मन और तन की सादगी, सत्य रूपी सड़क के निशान है। (४) जीते जी मरे जाओ अर्थात् अहंकार को छोड़ दो, तो सुखी हो जाओगे।

**पुष्प-६८—**भोग से तृप्ति कदापि नहीं—भोग भोगने से आज तक किसी की भी तृप्ति नहीं हुई, अपितु रोग ही बढ़े। वास्तव में भोग अन्त में भोगने वाले को ही भोग लेते हैं। इसलिये इनके प्रति जो आसक्ति (ममता) है, उसी को छोड़ दो तो नकद शान्ति मिल जायेगी।

हे जीव! जिसको विषय छोड़ देते हैं, वह वियोग में जलता रहता है और जो पुरुष विषयों को स्वयं छोड़ देता है, उसके तीनों ताप दूर हो जाते हैं।

याद रहे, स्वयं त्यागने में हमें शान्ति मिलेगी, पर यदि इन भोगों को सख्त बीमारी या मौत ने हमारे से लाचारी से छुड़ाया, तो अति दुःख सन्ताप होगा।

**पुष्प-६९—मन को सद्विचारों से सजाओ—**मन एक वाटिका की भाँति है। यदि इसमें नेक-विचारों के सुन्दर पौधे न लगाये जायें, तो बुरे विचारों के झाड़-झंखाड़ स्वयं ही उग जाते हैं। नये पौधे तभी उगा सकते हैं, जब झाड़-झंखाड़ साफ कर दी जायें। इसलिये धीरज और पुरुषार्थ द्वारा बुरे विचार-रूपी झाड़ को निकाल दें। तब वाटिका मनचाही पेड़-पौधों से सुसज्जित होगी, उसी तरह मन को सद्विचारों व नेक कर्मों से सुन्दर बनाना चाहिये।

**पुष्प-७०—सदा निर्लेप रहो—**भगवान के दर्शन शुद्ध मन द्वारा ही सम्भव है। जैसे इन्सान गन्दी जगह में नहीं बैठता, गन्दा पानी नहीं पीता, इसी तरह भगवान भी गन्दे और मैले मन में प्रगट नहीं होते।

उदाहरणार्थ—ब्रह्मा जी कमल पर, भगवान विष्णु क्षीर सागर में, शिवशंकर कैलाश (हिमालय) में—इनका विशेष निवास है। इसलिये यदि इन देवताओं को अपने हृदय में लाना चाहते हों तो तुम्हारा अन्तःकरण :—

- (१) कमल की तरह निर्लेप हो।
- (२) दूध की तरह सफेद हो।
- (३) हिमालय की तरह अचल व शीतल हो।

अरे बाबा ! जहाँ क्रोध रूपी अग्नि जल रही हो तो वहाँ कैलाश शिखर पर रहने वाले शंकर कैसे ठहरेगे ?

**पुष्प-७१—जरा सोचिये, विचारिये !—**

- (१) "मैं कौन हूँ" ? कहाँ से आया हूँ ? किस लिये आया हूँ ?
- (२) मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है ? किधर जाना है ?
- (३) मुझे क्या करना चाहिये ? मैं क्या कर रहा हूँ ?
- (४) मेरे वर्तमान कर्मों का फल क्या होगा ?
- (५) मृत्यु के बाद मैं कहाँ जाऊँगा ?
- (६) अन्त में मेरे साथ क्या जायेगा ?
- (७) क्या मैं वो धन जो मेरे साथ जायेगा, इक्कठा कर रहा हूँ ?

यदि इन प्रश्नों का वास्तविक (सही) उत्तर तुम्हारे पास नहीं है, तो तुम मुर्दे के समान हो।

हमें अपनी आत्मा से केवल इतना ही प्रश्न काफी नहीं है कि हम कितना चल चुके हैं। असल में देखना यह है कि हम किधर को जा रहे हैं। सोचना यह है कि हम क्या करने आये थे, क्या कर रहे हैं और क्या करना चाहिए।

जरा सोचो तो सही, आज तक आपने जिन रिश्तेदारों, धन, दौलत, स्थाई कोष (FDRs), लाक्स, बंगले, कारें, मकान आदि

को अपना मान रखा है, क्या-अंत समय इनमें से कोई-भी आपके साथ जायेगा ? यदि नहीं, तो आज तक आपने साँच नहीं, काँच को ही इक्कठा किया है।

**पुष्प-७२—मुस्कराना सीखें—**यदि आपसे कोई पूछे कि आपका स्वास्थ्य (तबीयत) कैसा है तो खिले हुए चेहरे से शीघ्र कह दो कि बहुत सुन्दर, ओ.के., (O.K.) ए-वन (A-ONE) वेरी फाइन (Very fine)। ऐसा कहने मात्र से ही एक प्रसन्नता की लहर दौड़ जायेगी और तुम्हारा आधा दुःख दूर हो जायेगा। यह अंनुभूत प्रयोग है। मुरझाया हुआ चेहरा किसी को पसन्द नहीं। मुरझाये हुए चेहरे से अपनी कठिनाइयों और मुसीबतों का रोना, कोई सुनना नहीं चाहता।

**पुष्प-७३—स्वार्थ का बखेड़ा—**प्यारे जागो ! यह छलनामयी (धोखेबाज) दुनियाँ है। यहाँ सब अपने मतलब के लिये ही सबसे प्रेम करते हैं। स्वार्थ-सिद्ध न होने पर नाती-घाती बन जाते हैं। फिर चाहे पिता हो, पुत्र, पत्नी, भ्राता भी क्यों न हों। याद रखो कि संसारी तब तक ही हमारे हैं, जब तक उनका स्वार्थ हमसे निकलता है।

**पुष्प-७४—**दृश्यं जगत् से वियोग अवश्यम्भावी—  
 सावधान ! तुम्हारी यह ज्वानी और यह रूप, धन, सम्मान सभी  
 चीजें नष्ट होने वाली हैं। इनका वियोग अवश्यम्भावी है। फिर  
 क्यों इनके चक्कर में पड़े हुये पिस रहे हो ?

**पुष्प-७५—**सर पटकते रहो !—ये सदैव स्मरण रखो  
 कि संसार के भोगों में वास्तविक सुख है ही नहीं। जो वस्तु जहाँ  
 है ही नहीं, वहाँ वह वस्तु मिलेगी कैसे ? टूटते रहते, दर-दर  
 भटकते रहते, सर पटकते रहते, सर्वत्र और सर्वदा, अन्त में निराशा  
 और व्यथा के ही थपेड़े लगेंगे। सच्चा सुख तो है केवल भगवान में  
 और उन सच्चे भगवान की प्राप्ति विवेक एवं वैराग्य से ही होती  
 है।

**पुष्प-७६—**शान्ति-प्राप्ति के मन्त्र—शान्ति के  
 गुरु-मन्त्र सुनिये और आचरण में लाइये।

- (१) किसी को छोटा व बुरा मत समझो। सभी में ईश्वर व्यापक  
 है।
- (२) अपने दुःख का कारण सिंवाय अपने पूर्व प्रारब्ध कर्मों के,  
 किसी अन्य को मत समझो।
- (३) किसी से भी सुख की आशा मत करो। कभी दुःखी नहीं  
 होगे।



- (४) कुछ भी अपना-मृत-समझो। सब-कुछ प्रभु का है।  
 (५) किसी का बुरा न चाहो। सभी से प्रेम कर लो।  
 (६) राग-द्वेष-को, त्याग और प्रेम से-मिटो दो।  
 (७) प्यार चाहते हो तो दूसरों के मन की शास्त्रानुकूल क्रिया करो।

- (८) मान चाहते हो-तो सद्गुण एवं योग्यता को बढ़ाओ।  
 (९) दूसरों को दुःखी देखो, तो सेवा और सहायता करो।  
 (१०) जीने का लालच और मरने का डर छोड़ दो।  
 इनके आचरण से नकद शान्ति मिलेगी अर्थात् कभी भी आपको अशान्ति न होगी।

आचरण में लाइये :—

- (१) अपनी खुद गर्जों और मजे के लिए किसी को दुःख मत दो।  
 (२) शरीर धारण किया है तो इसकी कीमत देनी ही पड़ेगी, अतः खुशी से अंदा कर दो।  
 (३) पाखण्ड, बनावट और दिखावे को छोड़ दो। मन को सच्चाई से टटोलो कि हकीकत क्या है।  
 (४) संसार में ऐसी नैमित्त किसी को नहीं मिली, जो संतोष से बेहतर व अच्छी हो।  
 (५) इन्सान को गरीबी इतना दुःख नहीं देती, जितना कि तृष्णा सताती है।

(६) विषय भोगों के चिन्तन को ईश्वर चिन्तन से मिटा दो।

**पुष्प-७७—सांसारिक सुख व सुन्दरता की क्षणिकता—**संसार का सुख और सुन्दरता ऐसी है जैसे यहाँ गंगोत्री में दस-बीस फुट पड़ी हुई बर्फ देखने में अत्यन्त सफेद और कोमल लगती है और सूरज की किरणें पड़ने से ऐसी चमक बढ़ जाती है कि आँखें चौंधिया जाती हैं। किन्तु यदि बर्फ को हाथ में लिया जाये तो क्षण भर में जल बनकर उसकी सफेदी और कठोरता गायब हो जाती है। वैसे ही संसार का सुख और सुन्दरता भी क्षणिक है।

आप कृपया विवेक पूर्वक थोड़ा सोचिये तो सही, ये जो सौन्दर्य-प्रसाधन है जैसे-क्रीम, पाउडर इत्यादि, इनकी सुन्दरता कितनी देर ठहरती है ? एक बार अच्छी तरह मुँह धोने से सबका दिवाला निकल जाता है और इसके विपरीत परलोक का सुख, आत्म-सुख सोने के टुकड़े के समान है। संसार का सुख-बर्फ का टुकड़ा है। इसलिये बुद्धिमान व्यक्ति सोचता है कि बर्फ तो क्षण प्रतिक्षण गल ही रही है और यह स्वर्ग अथवा परलोक सुख स्थायी रूप से काम में आयेगा।

**पुष्प-७८—मन की गति—**अपने मन की बात को पूरी करना ही भोग है और दूसरे के मन की बात को पूरा करना

सेवा है। मन को परमात्मा में लगाना ही वास्तविक भक्ति है और मन को मिटा देना ही मुक्ति है।

**पुष्प-७९—**सोचिए, आप क्या कर रहे हैं ?—क्या आप ईश्वर प्राप्ति के लिए जो कुछ भी कर सकते थे, कर लिया है ? यदि नहीं तो जल्दी कर डालो। जिन्दगी का क्या भरोसा है ? बीता हुआ समय किसी मूल्य पर भी वापस नहीं आ सकता। आयु दिन प्रतिदिन इस प्रकार घट रही है—जैसे फूटे घड़े से पानी बहा जा रहा हो।

**पुष्प-८०—**अपना कल्याण शीघ्र से—शीघ्र करो—जब तक शरीर स्वस्थ है, वृद्धावस्था नहीं आयी है, इन्द्रियों में शक्ति भरपूर है और मौत का वारंट नहीं निकला है, तभी तब पूर्ण प्रयत्न करके अपना कल्याण कर लेना चाहिये। कहीं ऐसा न हो कि घर में आग लगे फिर कुआँ खोदना शुरू करें। यह केवल व्यर्थ और हास्यास्पद ही होगा।

**पुष्प-८१—**शान्ति के गुरु मन्त्र सुनिये और आचरण में लाइये—ये अनमोल वचन सदैव हृदय में स्मरण रखें :—

(१) भक्ति के लिये—केवल भगवान् को ही अपना मानना। जैसे कि मीरा ने कहा था—“मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरा न कोई।”

(२) मुक्ति के लिये—किसी को भी अपना न मानो।

(३) स्वाधीनता के लिये—अपनी प्रसन्नता किसी दूसरे पर निर्भर मत रखो।

(४) शान्ति के लिये—सांसारिक इच्छाओं का त्याग कर दो।

(५) सुख की प्राप्ति के लिये—प्राप्त सुख को उदारतापूर्वक बांटते रहो।

(६) दुःख से बचने के लिये—किसी को भी दुःख मत दो।

भव सागर-से पार उतरने के चार उपाय :—

(१) ‘एक’ संतोष यानि धैर्य और शुक, अपनाने से।

(२) ‘दूसरा’ संत फकीरों से सत्संग करने से।

(३) ‘तीसरा’ विवेक व वैराग्य धारण करने से।

(४) ‘चौथा’ मन की शांति, यानि राग-द्वेष त्यागने से।

जीवन को सुखी बनाने के लिये तीन बातें जरूरी हैं :—

(१) ‘एक’ बे-फिकरी—यह ईश्वर विश्वास से मिलती है।

(२) ‘दूसरी’ बे-खोफी—यह निष्पाप जीवन बनाने से मिलती है।

(३) ‘तीसरी’ खुशी—यह निष्काम सेवा और ईश्वर-चिन्तन से मिलती है।

**पुष्प-८२**—किसी का प्रभुत्व यहाँ नहीं टिकता—सोचिये, तुम्हारे पिता-पितामह को कितना रोबदाब था। घर के लोग उनसे थर-थर काँपते थे। उनकी आज्ञा बिना कोई चू भी नहीं करता था। उनको देखकर घरवालों की हालत जैसे बिल्ली को देखकर चूहे की होती है, वैसी हो जाती थी। आज कहाँ है उनको वह प्रभुत्व ? उनको कोई याद भी नहीं करता। यही दशा तुम्हारी भी होगी। फिर क्यों इस घर के पीछे पागल हो रहे हो।

**पुष्प-८३**—“मैं” (अहंता) के ‘त्याग’ से प्रभु प्राप्ति—जब तक मैं-पन है, तब तक मेरापन भी ज़रूर रहेगा, और तभी तक परमात्मा भी दूर ही रहेंगे। क्योंकि वह जगह तो मैं-पन और मेरा-पन-ने रोक रखी है। फिर प्रभु कैसे आयें ? इसलिये शीघ्र ही अहन्ता, ममता को छोड़ दो।

**पुष्प-८४**—साधक का जीवन विचारमय हो—साधक को चाहिये कि वह कुछ बीलने से, कुछ करने से अथवा लेने-या देने से पहले विचार कर ले; कि किसमें मेरा हित अथवा अहित है। तार्त्पर्य यह है कि उसके द्वारा जाने या अनजाने, किसी को दुःख न पहुँचे। भगवान के घर में देर है, अन्धेर नहीं। अपने सभी कर्मों का फल अवश्यमेव भोगना पड़ेगा।

**पुष्प-८५—आदर्शमय जीवन—**अपने दैनिक जीवन को इतना सुन्दर बना लो कि संसार आपको चाहने लगे और अपने स्वयं की अन्तरात्मा को इतना सुन्दर बना लो कि भगवान भी आपको चाहने लगे।

संसार आपको कैसे चाहेगा ? (१) संसार से कुछ न चाहना और सदैव संसार की सेवा करने से संसार आपको चाहेगा। मतलब—काम आओ, कुछ न चाहो। (२) इसी प्रकार परमात्मा से कुछ न चाहना और सदैव परमात्मा की प्रसन्नता का ध्यान रखने से परमात्मा आपको चाहेगा।

**पुष्प-८६—बची को संभाल—**जैसे कुँए में से पानी निकालने के लिये करीब सौ फुट रस्सी ढाल दी जाती है और अपने हाथ में केवल दो फुट के करीब ही रह जाती है। इस तरह कुँए में से बाल्टी द्वारा पानी निकालकर प्यास बुझा सकते हैं। परन्तु यदि दो फुट वाली रस्सी हाथ से छूट जाए तो बाल्टी और रस्सी नीचे कुँए में चली जायेगी। फिर रस्सी, बाल्टी और पानी कुछ भी नहीं मिलेगा। इसी प्रकार आज तक जो आयु गयी सो तो कुँए में गयी, जो थोड़ी सी इची है—उसे नेक-कार्यों में लगा दो तो बाकी की जिन्दगी सफल हो जायेगी।

**पुष्प-८७—**त्यागना सहज है—अपने बनाये दोषों को दूसरा कोई नहीं मिटा संकता। दोषों को त्याग करने में हम सदा स्वतंत्र हैं, पर सुख की इच्छा हमें त्याग करने नहीं देती है। अरे बाबा ! मोह ममता छोड़ने में क्या कठिनाई है ? तुम्हीं ने डाली है, तुम्हीं निकालो। हमने जो डाली थी, हमने निकाल ली। देखो, कितना खुश और मस्त रहते हैं—आप भी ममता छोड़ कर मस्त रह सकते हैं। ये अनुभूत प्रयोग है।

त्याग करना अति सहज है परन्तु ग्रहण में कठिनाई हो सकती है। किन्तु राग के वशीभूत होकर इन्सान इस सच्चाई को नहीं समझता और भूल जाता है वास्तविकता को।

बताओ ! जब तुम पैदा हुए थे और जब तुम यहाँ से चले जाओगे, उस समय कौन तुम्हारा होगा ? कोई नहीं ! हजारों माता, पिता, पितामह तुम्हारे हो गये। बताओ ! कौन इन में तुम्हारा हुआ और तुम किस के हुए ? तुम्हारे पिछले जन्म के पिता पितामह कहाँ गये ?

**पुष्प-८८—**महापुरुष के लक्षण—अपने कार्यों का उसी भाँति निरीक्षण करो जैसे वे दूसरों के काम हों। सभी के साथ शान्ति का व्यवहार और सहानुभूति रखना ही महापुरुष का लक्षण है। प्रभु के प्रेम को पाना हो तो जीते जी मरना सीखो।

देखिये, जब बीज मरता है, तब वृक्ष बनकर फल देता है।

**पुष्प-८९—भक्त की परीक्षा—**अगर कोई खास जरूरत वाली चीज़ भी तुम्हारे पास न हों, तों समझ लो भगवान ने हमारी भलाई के लिये ऐसा किया है। भक्त की यह परीक्षा है और इसी को ईश्वर की निर्भरता कहते हैं।

प्रभु-निर्भरता के तीन लक्षण हैं—

- (१) किसी से कुछ नहीं मांगना।
- (२) बिना मांगे मिले तो भी न लेना।
- (३) लेना ही पड़े तो बांट देना।

यही सच्चे प्रेमी भक्त के लक्षण हैं।

**पुष्प-९०—मुख्य-साधन—**प्रभु-प्राप्ति—या आत्म-साक्षात्कार के दो मुख्य साधन हैं—(१) भक्ति — सदैव प्रभु के विरह की आग हृदय में धधकती रहे, जिससे सभी द्वेष जल जायें। (२) ज्ञान — विवेक, वैराग्य की पुष्टि होने पर सर्वदा हृदय में परमानन्द की गंगा लहराती रहे।

**पुष्प-९१—सन्तोषी सदा सुखी—**चाह को मिटाने अथवा जितना कुछ हमारे पास है; उतने से ही प्रसन्न रहने का



नाम संतोष है। जो व्यक्ति कुछ भी नहीं चाहता, उसे कोई दुःख नहीं दे सकता। त्याग, ज्ञान और प्रेम की कमी में कभी भी संतोष नहीं करना चाहिये। तात्पर्य है, "सन्तोषी सदा सुखी" और "लोभी सदा दुःखी" रहता है।

**पुष्प-९२—**जो करोगे, सो भरोगे—जो कुछ भी तुम अपने लिये दूसरों से चाहते हो वहीं तुम दूसरों के लिये करो। तथा जो कुछ तुम दूसरों से अपने लिये नहीं चाहते, वह तुम दूसरों के लिये मत करो। यही सच्चा ज्ञान है, भक्ति है, योग है।

**पुष्प-९३—**आखिर यह तन खाक का ढेर बनेगा—अरे बाबो ! तुम क्यों शरीर का इतना अभिमान करते हो ? काहें व्यर्थ में अकड़े फिरते हो ? किस लिये ताकत और शानौ-शौकत के नशे में डूबे हो ? सोच लो ! यह एक दिन खाक हो जायेगा ! फिर अहंकार किस बात का ?

शरीर की तीन ही तो अन्तिम गतियाँ हैं—यानि यदि शरीर को किसी पशु ने खा लिया तो बिष्ठा बन जायेगा, अगर जला दिया तो खाक बन जायेगा और अगर जमीन में दफना दिया तो कीड़ों का ढेर बन जायेगा।

इस लिये जितना भी बन संके, परोपकार करे लो !

पुष्प-९४—आप क्या चाहते हो, स्वयं चुन लो—

- (१) लेना चाहते हो तो आशीर्वाद लो।
- (२) मारना चाहते हो तो बुरी इच्छा को मारो।
- (३) जीतना चाहते हो तो तुष्णा को जीतो।
- (४) पीना चाहते हो तो ईश्वर-चिन्तन रूपी रस को पियो।
- (५) पहनना चाहते हो तो नेकी का जामा पहनो।
- (६) देना चाहते हो तो नीची नजर करके दो।
- (७) करना चाहते हो तो दुखियों की सेवा करो।
- (८) छोड़ना चाहते हो तो पाप—अत्याचार को छोड़ो।
- (९) बोलना चाहते हो तो मीठे वचन बोलो।
- (१०) तोलना चाहते हो तो बात को तोलो और ठीक कार्य करो।
- (११) देखना चाहते हो तो अपने दोषों तथा दूसरे के गुणों को देखो।
- (१२) सुनना चाहते हो तो ईश्वर का गुणगान सुनो।
- (१३) पुकारना चाहते हो तो प्रभु को पुकारो।
- (१४) विचारना चाहते हो तो अपनी आत्मा का विचारो।
- (१५) मान चाहते हो तो अपने सद्गुणों एवं योग्यता को बढ़ाओ।
- (१६) प्यार चाहते हो तो दूसरों के मन के मुताबिक करो।
- (१७) मरना चाहते हो तो जीते जी मरना सीखो।
- (१८) जीना चाहते हो तो, दूसरों के लिये जियो।

(१९) सहना-चाहते हो तो अपनी-निन्दा को सहर्ष सहन करो।

(२०) जाना चाहते हो तो तीर्थस्थानों में जाओ।

(२१) खोलना चाहते हो तो हृदयरूपी कपाट को खोलो।

यहाँ-किसी को किसी-से-प्यार नहीं। सभी अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये एक दूसरे से बंधे हैं। भला वह कौन सा ऐसा इन्सान है, जो बिना स्वार्थ के मुहब्बत करता है।

**पुष्प-९५**—अपने से छोटों को देखो—जब किसी अमीर आदमी को पालकी में बैठा देखो, तो उस अमीर की अमीरी पर ईर्ष्या न करके पालकी को उठाने वाले मजदूरों की हालत से अपनी तुलना करके प्रभु का धन्यवाद करो। अतएव सदैव शान्त रहने के लिये अपने से छोटों की तरफ देखा करो।

कितना दिया है प्रभु ने तुझे। क्या-इसके बारे में तू ने कभी सोचा है ? अरे बाबा ! तुम्हें कोई एक Cup चाय का देता है तो दस बार Thank you; Thank you करते हो। क्या तू ने कभी उस मालिक का भी Thanks किया है; जिस ने तुझे-शरीर, धन, दौलत, परिवार का सुख और अनेक प्रकार के अनमोल-हीरे प्रदान किये हैं।

याद रख ! बहुत दिया देने वाले ने तुझको।

यदि सुख चाहते हो तो तृष्णा को जीत लो। चाहना कुष्ट की बीमारी है, खुजलाते रहो, कंभी पूरी नहीं होती। अतः संतोष रूपी अमृत पी कर सदा शान्त हो जाओ।

दूसरों की उन्नति देख कर जलो मत। खुश हो जाओ। यह उनके भाग्य (कर्मों) का फल है।

याद रखो। ईर्ष्या (हसद) कैसर से भी अधिक खतरनाक है—यह जीव को अन्दर ही अन्दर साढ़ती और जलाती है। विवेक से काम लो। वैराग्य धारण करो, सदा शान्त रहो। दुःखी को देख कर करुणित होना एवं सुखी को देख कर प्रसन्न होना, संसार की सबसे बड़ी सेवा है। अर्थात् दुखियों की सेवा, सुखियों को देख कर खुश होना, संमान वालों से मैत्री एवं पापियों से उपेक्षा करना ही मन की शुद्धि के चार उपाय हैं।

**पुष्प-९६—**विचार से काम लो—हर चमकदार चीज सोना नहीं हो सकती। इसलिये किसी वस्तु की चमक-दमक में न फँसो। अपितु उसकी असलियत तक पहुँचने का प्रयत्न करो। जैसे यह शरीर, इन्द्रिय-दृष्टि से बहुत सुन्दर देखता हुआ भी बौद्धिक दृष्टि से इसमें कुछ भी सुन्दरता दिखाई नहीं पड़ती, अपितु हाड़, चाम, बिष्ठा, कफ, थूक, मूत्र, बलगम, लहू, पाक आदि, वास्तव

में गन्दगी के धैले के ऊपर रेशम का रुमाल ही रखा है, इसलिये चेतो।

**पुष्प-९७—दुख की जननी ममता—**दुःख दुनियाँ की चीजें नहीं देता है, परन्तु उसकी ममता ही दुःख देती है। इसलिये संसार की मोह-ममता अर्थात् "मैं—मेरा" पन छोड़ दो। अंतः जीवन को सुखी बनाने के लिये तीन बातें अत्यावश्यक हैं :—(१) निश्चिन्तता—प्रभु विश्वास से मिलती है। (२) निर्मयता—निष्पाप जीवन से मिल सकती है (३) प्रसन्नता—पर-सेवा और मोह त्याग से मिलती है।

**पुष्प-९८—पुण्यात्मा बनो—**दुनियाँ के समुद्र से पार होने के लिये हमें शरीर रूपी नाव मिली है। नाव हमें तभी पार ले जा सकती है, जब एक तो वजन ज्यादा न हो और दूसरा खेवट होशियार हो। इस प्रकार शरीर रूपी नाव से हम तभी आसानी से पार हो सकते हैं, जब इस शरीर रूपी नाव में पापों का बोझ अधिक न हो और इन्द्रियाँ रूपी पतवार ठीक हों।

**पुष्प-९९—**यदि भगवान् कृष्ण से मिलना हो तो गोपी बन जाओ !—जैसे :—

(१) श्रीकृष्ण भगवान के सिर में कमी दर्द हुआ तो श्रीकृष्ण ने नारद जी से कहा—“किसी परम भक्त की चरण-धूल लावो, तो यह दर्द ठीक हो सकता है”। नारद जी सभी भक्तों के पास गये। मगर किसी ने भी नरक के डर के मारे, चरण-धूलि नहीं दी। तब वे भगवान श्री कृष्ण जी के आदेशानुसार गोपियों के पास गये। यह सुनते ही वे व्यथित हो गईं। कहने लगी—हमारे श्याम सुन्दर बीमार है, जल्दी चरण-धूलि ले जाओ। हम चाहे कोटि-कोटि जन्म नरक में पड़ी सड़ती रहें पर हमारे प्रभु ठीक हो जायें।

(२) इसी प्रकार एक बार किसी सखी ने बांसुरी से पूछा—अरी बांसुरी ! तुमने ऐसा कौन-सा तप किया है, जो प्रभु तुमको हर वक्त अधर-अमृत से लगाकर रखते हैं। बांसुरी ने कहा—मैं तो जड़ व गाँठवाली हूँ परन्तु अन्दर से पोली हूँ। मेरे में कोई गुण नहीं है। मगर जो मेरे प्रभु बोलते हैं, वही मैं बोलती हूँ। अपना कुछ भी नहीं अलापती और अपने दिल में कोई भी अच्छा बुरा नहीं रखती। शायद इसी गुण से श्याम सुन्दर की प्रिय पात्र बन गयी हूँ।

**पुष्प-१००—**ईश्वर-प्राप्ति के सूत्र [प्राणी सेवा ही प्रभु की पूजा है]—ईश्वर को पाने के लिये अथवा हमेशा

अमिट रहने वाली खुशी को प्राप्त करने के लिये गरीबों से प्यार और दुखियों की सहायता करो तथा सद्गुरु की शरण में जाकर, सर्वस्व चढ़ाकर मस्त हो जाओ।

**पुष्प-१०१ (क)**—जो कहते हो, सो करो!—भक्त के हृदय में भगवान को देखकर सुख-दुःख बाहर से ही लौट जाते हैं, क्योंकि यहाँ पर तो ठसा-ठस भगवान ही भरे हैं; हमारे लिये कोई खाली जगह ही नहीं है। वह सदैव वहीं पर रहता है।

उसको अपने अन्दर जानकर भक्त कहता है :—

सीताराम सीताराम सीताराम कहिये।

जाहि विधि राखे राम ताही विधि रहिये॥

पर आप जरा निष्पक्ष होकर अपने हृदय को टटोलो। आप उसकी मर्जी में खुश रहते हैं क्या ? आपके मुख में सदैव रामनाम है क्या ? आपका शरीर सेवा में तत्पर है तो सदैव राम आपसे पास है। तुम कभी भी अकेले नहीं हो अर्थात् जिसके पास सदैव राम हो, क्या वह डरेगा ? क्या वह कभी दीन होगा ? क्या उसको कुछ और कमी रहेगी ? कदापि नहीं। वह तो सदैव सुख-दुःख, हानि-लाभ इत्यादि प्रत्येक द्वन्द्वों को प्रभु की इच्छा समझकर बड़ी प्रसन्नता के साथ सहन करता है। यही असली तप है। वैसे तो

जल-भुन करके अनिच्छा से सभी को सहन करना पड़ता है। यदि आपने अपनी जीवन-होरी प्रभु को सौंप दी है, तो चिन्ता कैसी ?

**पुष्प-१०१ (ख)—ईश्वर जहाँ भी जैसा भी रखे, एतराज कैसा ?—**क्या आपने राम के सिवाय सबकी आशा छोड़ी है ? या आपने संसार से ममता तोड़ी है क्या ? संतों के संग में आपने अहंकार को छोड़ा है या केवल मुख से ही तोते की तरह प्रार्थना रटी है। असली भक्त तो सर्वस्व अपने इष्ट को सौंपकर निर्मय और निश्चिन्त हो जाता है।

**पुष्प-१०२—गुरु करो . जान के !—**आत्म साक्षात्कार (नकद शान्ति) के लिये शिष्य को सद्गुरु की शरण में जाकर विधिपूर्वक वेदान्त का श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन करना चाहिए। इस के लिये गुरु-भक्ति अति आवश्यक है।-

वास्तव में जो गुरु के शासन को सह सके और सद्गुरु के संकल्प में अपना संकल्प मिला दे, वही सच्चा शिष्य है। बस अपने सद्गुरु पर हावी होने का प्रयत्न न करे।

किसी भी योग्यता या धन से गुरु को खरीदा नहीं जा सकता। दरअसल योग्यता एवं बुद्धि का अभिमान ही हमको



सद्गुरु से अमिन्न नहीं होने देता। गुरु कृपा पा लेना शिष्य के जीवन का प्रथम लक्ष्य है। शिष्य को चाहिये कि वह गुरु के प्रति प्यार एवं आदर, उनके वचनों पर पूर्ण विश्वास तथा उनकी आज्ञा का पालन करे।

कृपा चार प्रकार की होती है :—(१) ईश्वर कृपा, (२) सद्गुरु कृपा, (३) शास्त्र कृपा, और (४) आत्म कृपा (अपनी कृपा)। इनमें आत्म कृपा ही मुख्य है। जब शिष्य स्वयं यह चाहेगा कि उसके दोष दूर हों, तभी प्रेरणा-शक्ति का संचार उसके जीवन में होगा।

**पुष्प-१०३—ईर्ष्या** [हसद] : भयंकर, कैसर है—एक अनुभव की बात कहता हूँ। वह है ईर्ष्या (हसद) के बारे में, जिससे लोग व्यर्थ ही दुःखी रहते हैं। ईर्ष्या उसको कहते हैं कि किसी की उन्नति देखकर अन्दर से जलना-सड़ना, कि अमुक को ज्यादा प्यार मिल गया, हमको नहीं मिला। वास्तव में यह कैसर से भी खतरनाक बीमारी है जो अन्दर ही अन्दर सड़ाती है।

वास्तव में महापुरुषों के मन में किसी के प्रति कोई भेदभाव होता ही नहीं। ये तो गंगा प्रवाहवत् सर्वदा शीतल रहते हैं और सबको खुश रखने का भरसक प्रयत्न करते हैं। जैसे गंगाजी

के पास कोई जाये और अगर बर्तन ही छोटा हो तो उसमें गंगाजी को दोष दे कि पानी कम दिया है। वैसे ही अज्ञानी लोग महापुरुषों को भी दोषी ठहराते हैं और कभी-कभी तो ईश्वर तक को भी कोसने लगते हैं। अपने पूर्व के अर्जित कर्म की ओर देखते नहीं, उल्टा ईश्वर को ही कहते हैं।

उनकी तो सदा ही शिकायत रहती है। चाहे कोई अपनी जान भी दे दे, तो भी ये प्रसन्न होना सीखे नहीं। कभी-कभी जलमुन कर वे हमें भी ध्वंग्य कसने लगते हैं। कहते हैं कि यह कोई आसमान से उतरा है जो उसको आते ही इतनी सुविधा, इतना प्यार मिल गया। अरे बाबा ! यह तो उसका भग्य उसके कर्म का ही फल है। यदि आप कारण पर ईर्ष्या करोगे तो सदैव सुखी रहोगे और यदि कार्य पर करोगे तो सदैव दुःखी रहोगे। उदाहरणार्थ, किसी ने प्रथम श्रेणी में एम.ए. पास किया। क्यों पास किया ? यह कार्य में ईर्ष्या होगी। कैसे पास हुआ ? यह कारण में ईर्ष्या होगी।

यहाँ तक ईश्वर को भी दोषी ठहराने में हिचकते नहीं और उस परम कृपालु को सितमगर (जालिम) तक भी कह देते हैं। यह कसूर उनके देखने का है, क्योंकि परमात्मा ने जितनी सुख सुविधा दी है, वह तो देखते नहीं, उसका धन्यवाद तो करते नहीं। जो नहीं दिया उसको याद करके जलते रहते हैं।

आज संसारी अपनी कामनाओं के कारण दुखी है। वह अपने पूर्व जन्म के कर्मों के फल की ओर तो देखता नहीं, परन्तु ईश्वर को ही दोषी ठहराता है। ईश्वर कभी किसी को दुःख नहीं देता। उसके पास तो दुःख है ही नहीं। "आनन्द ब्रह्म"—यह शास्त्र प्रमाण है।

ईश्वर समदर्शी है, उसे कोई फर्क नहीं। गंगा जी भरी पड़ी है तुम्हारा बर्तन ही छोटा है, इस में गंगा जी का क्या दोष।

इसलिये बाबा। ईर्ष्या करना छोड़ दो। दूसरों को सुखी और खुश देखकर जलो मत। खुश हो जाओ, उनसे दोस्ती कर लो। यही संसार का सबसे बड़ा तप है।

**पुष्प-१०४**—मन को सर्वथा शांत रखो—शरीर रोगी भी रहे तो भी अपने मन को शांत रखो। तन मन और धन, ये तीन चीजें ईश्वर द्वारा मिली हैं। उनमें तन और धन को ठीक रखना सर्वथा असम्भव है, क्योंकि अवतारों के भी शरीर नहीं रहे। अरे बाबा ! जिसका नाम ही शरीर है (उर्दू भाषा में शरीर को शरारती कहते हैं), जो है ही शरीर (शरारती) तो उससे शराफत की आशा रखना क्या बेवकूफी नहीं है ? तन और धन किसी का भी एक रस रहा नहीं है, न रहेगा, न रह सकता है। परन्तु मन को हम अम्यास से ठीक रख सकते हैं। यदि मन को शांत कर

लिया तो तन का रोग भी आधा भास होगा और जो मन शांत न रख सके तो रोग का दुगुना अनुभव होगा। ज्ञानी को केवल कष्ट होता है मगर दुःख नहीं होता है। शारीरिक व्यथा को कष्ट कहते हैं और मानसिक चिन्ता को दुःख कहते हैं। अज्ञानी को कष्ट एवं दुःख दोनों ही होता है; वास्तव में कष्ट २० पैसे और दुःख ८० पैसे होता है।

बन्धन और मोक्ष का कारण तो मन ही है। शुद्ध मन मोक्ष का कारण, अशुद्ध मन बंधन का। अगर आपने शरीर धारण किया है तो आपको उसका टैक्स देना ही पड़ेगा। इसलिए खुशी से दे दो यह असली सात्विक तप है।

**पुष्प-१०५—द्वेष की दवाई मोहब्बत—**एक अनुभव की बात है :—“नफरत” (द्वेष) नफरत से कमी नहीं कटेगी। नफरत जब भी कटेगी, मोहब्बत से कटेगी।

इसलिए किसी ने यदि आपसे बुराई की है तो आप उसे सर्वदा के लिये भूल जाओ परन्तु यदि किसी ने आप के साथ अच्छाई की हो तो वह सर्वदा याद रखो। आपका मन समता में स्थित रहेगा। ममता वाले में समता नहीं रहती।

**पुष्प-१०६—संसार को मुसाफिरखाना समझो—**दुनिया फानी है, चला चली का मेला है। सब चन्द रोज



स्वामी लक्ष्मण दास जी अवधूत